International Conference on Social Science & Humanities Trends
International Journal for Research Trends in Social Science & Humanities
April 2025
ISSN: 2584-2455

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय ज्ञान परंपरा: एकात्मता और सतत विकास का एक वैकल्पिक मार्ग

अजय कुमार दूबे
शोध छात्र, संस्कृत विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली
प्रो. (डॉ.) गीता वर्मा
शोध निर्देशिका, प्रोफेसर एवं प्रभारी, संस्कृत विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा (**IKS)** की वैश्विक प्रासंगिकताओं का अन्वेषण करता है। वर्तमान विश्व जब जलवायु परिवर्तन, मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक विखंडन जैसे संकटों से जूझ रहा है, तब भारतीय मनीषा का 'एकात्म दृष्टिकोण' एक वैकल्पिक मार्ग प्रस्तुत करता है। यह शोध आयुर्वेद, योग, गणित और पर्यावरण नैतिकता के माध्यम से यह सिद्ध करता है कि भारतीय ज्ञान केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द- वर्तमान वैश्विक चुनौतियाँ और उभरते विमर्श (भू-राजनीति, अर्थव्यवस्था, पर्यटन एवं सांस्कृतिक क्षेत्र और सुरक्षा).।

1. प्रस्तावना: वैश्विक संकट और भारतीय दृष्टि की आवश्यकता

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य अभूतपूर्व परिवर्तन और संकटों के दौर से गुजर रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तीव्र प्रगति ने जहाँ मानव जीवन को सुविधा-संपन्न बनाया है, वहीं इसके साथ अनेक जटिल समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं। जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, जैव विविधता का ह्रास, प्राकृतिक संसाधनों का अति-दोहन, मानसिक तनाव, सामाजिक विखंडन तथा नैतिक मूल्यों का पतन–ये सभी समस्याएँ आधुनिक सभ्यता के समक्ष गंभीर चुनौती के रूप में उपस्थित हैं।

21वीं सदी का मनुष्य बाह्य रूप से जितना समृद्ध और उन्नत दिखाई देता है, आंतरिक रूप से उतना ही अशांत, असंतुलित और असंतुष्ट प्रतीत होता है। भौतिक प्रगति के बावजूद जीवन में उद्देश्यहीनता, आत्मविस्मृति (**Self-alienation)** और अस्तित्वगत संकट (**Existential Crisis)** की अनुभूति बढ़ती जा रही है। इस परिस्थिति में यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि क्या केवल तकनीकी विकास और आर्थिक वृद्धि मानवता के समग्र कल्याण के लिए पर्याप्त हैं **?**

स्पष्टतः इसका उत्तर नकारात्मक है। आज आवश्यकता एक ऐसे समग्र (**Holistic)** दृष्टिकोण की है, जो मानव जीवन के भौतिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक–सभी आयामों को संतुलित रूप से विकसित कर सके। यही

वह बिंदु है जहाँ भारतीय ज्ञान-परम्परा (**Indian Knowledge System – IKS)** की प्रासंगिकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

भारतीय ज्ञान-परम्परा विश्व की प्राचीनतम और सतत् जीवित बौद्धिक परम्पराओं में से एक है, जिसने सहस्राब्दियों से मानव जीवन के विविध आयामों पर गहन चिंतन किया है। 'ज्ञान' शब्द संस्कृत की 'ज्ञा' धातु से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है–बोध या अनुभूति। भारतीय दृष्टि में ज्ञान केवल सूचना का संग्रह नहीं, बल्कि वह चेतना है जो अज्ञान के अंधकार को दूर कर सत्य के प्रकाश का अनुभव कराती है।

ऋग्वैदिक परम्परा में ज्ञान को मुक्ति का साधन माना गया है– "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः"। यहाँ मुक्ति का आशय केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि मानसिक, सामाजिक और बौद्धिक बंधनों से मुक्ति भी है। इस प्रकार भारतीय ज्ञान-परम्परा का मूल उद्देश्य मानव को संकीर्णताओं से ऊपर उठाकर सार्वभौमिक चेतना से जोड़ना है।

पश्चिमी ज्ञान-परम्परा में जहाँ प्रायः द्वैतवाद (**Dualism)** की प्रधानता रही है, वहाँ भारतीय चिंतन 'अद्वैत' और 'एकात्मता' को स्वीकार करता है। यह दृष्टिकोण मनुष्य और प्रकृति, आत्मा और परमात्मा तथा व्यक्ति और समाज के बीच किसी प्रकार के विभाजन को नहीं मानता, बल्कि उनके बीच अंतर्संबंध और एकता को स्थापित करता है।

उपनिषदों का प्रसिद्ध शांति मंत्र–

"ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥"

इस समग्रता और अखंडता का दार्शनिक प्रतिपादन करता है। यह मंत्र यह स्पष्ट करता है कि सृष्टि का प्रत्येक अंश पूर्णता का ही विस्तार है, और इस पूर्णता को समझे बिना न तो जीवन का संतुलन संभव है और न ही सतत विकास।

इसी एकात्म भाव को सामाजिक और वैश्विक स्तर पर स्थापित करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है–

"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते॥"
(ऋग्वेद 10.191.2)

यह मन्त्र केवल धार्मिक या आध्यात्मिक उपदेश नहीं, बल्कि एक सामाजिक-सांस्कृतिक सिद्धांत है, जो सहयोग (**Cooperation),** संवाद (**Dialogue)** और सामूहिक चेतना (**Collective Consciousness)** की आवश्यकता को प्रतिपादित करता है। वर्तमान वैश्विक संदर्भ में, जहाँ राष्ट्रों के बीच संघर्ष, प्रतिस्पर्धा और अविश्वास की प्रवृत्ति बढ़ रही है, यह वैदिक दृष्टिकोण 'सह-अस्तित्व' और 'सह-विकास' का मार्ग प्रशस्त करता है।

इसके अतिरिक्त, भारतीय परम्परा में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का आदर्श सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की प्रेरणा देता है।

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् // महोपनिषद् [4/71]

यह दृष्टिकोण न केवल अंतरराष्ट्रीय संबंधों को मानवीय बनाता है, बल्कि वैश्विक समस्याओं के समाधान के लिए एक नैतिक आधार भी प्रदान करता है।
अतः यह स्पष्ट है कि भारतीय ज्ञान-परम्परा केवल अतीत की सांस्कृतिक विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक जीवंत, प्रासंगिक और व्यावहारिक मार्गदर्शक है। यह परम्परा मनुष्य को 'स्व' से 'समष्टि' की ओर ले जाती है और एक ऐसे संतुलित, समन्वित एवं सतत् विश्व-व्यवस्था की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करती है, जहाँ विकास और प्रकृति, विज्ञान और आध्यात्म, तथा व्यक्ति और समाज के बीच सामंजस्य स्थापित हो सके।
इसी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय ज्ञान-परम्परा के 'एकात्म दृष्टिकोण' का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित करता है कि यह प्रणाली वैश्विक संकटों के समाधान हेतु एक प्रभावी वैकल्पिक मार्ग प्रदान कर सकती है।

2. भारतीय ज्ञान-परम्परा : अवधारणा और संरचना:

भारतीय ज्ञान-परम्परा किसी एक ग्रन्थ, विचारधारा या दर्शन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक सतत, समन्वित और बहुआयामी बौद्धिक परम्परा है, जिसका विकास सहस्राब्दियों के अनुभव, चिंतन और साधना के माध्यम से हुआ है। इसमें वेदों की ब्रह्माण्डीय दृष्टि, उपनिषदों की आत्मविद्या, भगवद्गीता का कर्मयोग, षड्दर्शन की तार्किकता, योग का आत्मानुशासन तथा आयुर्वेद की समग्र स्वास्थ्य-परिकल्पना एक-दूसरे के पूरक रूप में विद्यमान हैं। इस प्रकार यह परम्परा ज्ञान के विविध आयामों को एक समग्र ताने-बाने में जोड़ती है, जहाँ दर्शन, विज्ञान, आचार और आध्यात्म अलग-अलग न होकर परस्पर संबद्ध माने जाते हैं।
भारतीय ज्ञान-परम्परा की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह ज्ञान को केवल बाह्य जगत के अध्ययन तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसे 'आत्मबोध' (**Self-realization)** से जोड़ती है। यहाँ ज्ञान का उद्देश्य केवल वस्तुओं का विश्लेषण नहीं, बल्कि ज्ञाता (**Subject)** की चेतना का परिष्कार भी है। इसीलिए भारतीय चिंतन में 'ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय' का त्रिवेणी-संबंध स्थापित किया गया है, जो यह दर्शाता है कि ज्ञान की प्रक्रिया में अनुभव, अनुभूति और सत्य–तीनों का समन्वय आवश्यक है।
उपनिषदों के महावाक्य इस चेतना-केन्द्रित दृष्टिकोण को अत्यंत सशक्त रूप में अभिव्यक्त करते हैं–
भारतीय ज्ञान-परम्परा किसी एक ग्रन्थ, विचारधारा या दर्शन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक सतत, समन्वित और बहुआयामी बौद्धिक परम्परा है, जिसका विकास सहस्राब्दियों के अनुभव, चिंतन और साधना के माध्यम से हुआ है। इसमें वेदों की ब्रह्माण्डीय दृष्टि, उपनिषदों की आत्मविद्या, भगवद्गीता का कर्मयोग, षड्दर्शन की तार्किकता, योग का आत्मानुशासन तथा आयुर्वेद की समग्र स्वास्थ्य-परिकल्पना एक-दूसरे के पूरक रूप में विद्यमान हैं। इस प्रकार यह परम्परा ज्ञान के विविध आयामों को एक समग्र ताने-बाने में जोड़ती है, जहाँ दर्शन, विज्ञान, आचार और आध्यात्म अलग-अलग न होकर परस्पर संबद्ध माने जाते हैं।

भारतीय ज्ञान-परम्परा की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह ज्ञान को केवल बाह्य जगत के अध्ययन तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसे 'आत्मबोध' (**Self-realization)** से जोड़ती है। यहाँ ज्ञान का उद्देश्य केवल वस्तुओं का विश्लेषण नहीं, बल्कि ज्ञाता (**Subject)** की चेतना का परिष्कार भी है। इसीलिए भारतीय चिंतन में 'ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय' का त्रिवेणी-संबंध स्थापित किया गया है, जो यह दर्शाता है कि ज्ञान की प्रक्रिया में अनुभव, अनुभूति और सत्य–तीनों का समन्वय आवश्यक है।

उपनिषदों के महावाक्य इस चेतना-केन्द्रित दृष्टिकोण को अत्यंत सशक्त रूप में अभिव्यक्त करते हैं–

"प्रज्ञानं ब्रह्म" (चेतना ही ब्रह्म है), (ऐतरेयोपनिषद् 3.1.3)

"अहं ब्रह्मास्मि" (मैं ब्रह्म हूँ), (बृहदारण्यकोपनिषद् 1.4.10)

"तत्त्वमसि" (तू वही है), (छान्दोग्योपनिषद् 6.8.7)

"अयमात्मा ब्रह्म" (यह आत्मा ही ब्रह्म है) (माण्डूक्योपनिषद् 2)

ये महावाक्य यह प्रतिपादित करते हैं कि ज्ञान का परम लक्ष्य आत्मा और ब्रह्म की एकता का प्रत्यक्ष अनुभव है। यहाँ ज्ञान बाह्य, वस्तुनिष्ठ (**Objective)** न होकर आंतरिक, अनुभवात्मक (**Experiential)** और चेतनात्मक (**Consciousness-based)** है।

वर्तमान वैश्विक संदर्भ में, जहाँ मनुष्य भौतिक उपलब्धियों के बावजूद आत्मविस्मृति (**Self-alienation)** और अस्तित्वगत संकट (**Existential Crisis)** से जूझ रहा है, यह भारतीय दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होता है। यह मनुष्य को बाह्य उपलब्धियों के मोह से हटाकर आंतरिक संतुलन, आत्मचेतना और सार्वभौमिक एकात्मता की ओर उन्मुख करता है। इस प्रकार भारतीय ज्ञान-परम्परा न केवल दार्शनिक चिंतन का आधार प्रदान करती है, बल्कि मानव जीवन के समग्र विकास और वैश्विक संतुलन के लिए एक स्थायी मार्ग भी प्रस्तुत करती है।

3. ज्ञान मीमांसा और वैश्विक दर्शन:

भारतीय ज्ञान-मीमांसा में ज्ञान के स्वरूप, साधन और प्रमाणों का अत्यंत सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक विवेचन प्राप्त होता है। यहाँ प्रत्यक्ष (इन्द्रिय अनुभव), अनुमान (तर्काधारित निष्कर्ष), उपमान (सादृश्य के आधार पर ज्ञान) तथा शब्द (प्रामाणिक वचन) को ज्ञान के प्रमुख साधन माना गया है। यह वर्गीकरण इस बात को दर्शाता है कि भारतीय चिंतन केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि गहन तार्किक और विश्लेषणात्मक भी है। न्याय दर्शन ने तर्कशास्त्र के माध्यम से ज्ञान की प्रमाणिकता को स्थापित किया, जबकि वैशेषिक दर्शन ने पदार्थ और उसके गुणों का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को सुदृढ़ किया।

3.1 चेतना का विज्ञान

भारतीय दर्शन में चेतना को ज्ञान का मूल आधार माना गया है। उपनिषदों का 'अयमात्मा ब्रह्म' सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि आत्मा और ब्रह्म एक ही सार्वभौमिक चेतना के रूप हैं। यह दृष्टिकोण आधुनिक विज्ञान के

कुछ सिद्धांतों, विशेषतः 'क्वांटम एंटांगलमेंट' से साम्य रखता प्रतीत होता है, जहाँ ब्रह्मांड के विभिन्न तत्वों के बीच अदृश्य संबंध की कल्पना की जाती है। इस प्रकार भारतीय चिंतन चेतना को केवल व्यक्तिगत अनुभव न मानकर सार्वभौमिक सत्ता के रूप में देखता है।

3.2 वैश्विक शांति का दर्शन

वर्तमान समय में बढ़ते वैश्विक संघर्षों और विभाजन के बीच भारतीय दर्शन का 'वसुधैव कुटुम्बकम्' सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक है, जो समस्त विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की प्रेरणा देता है। ऋग्वेद का मन्त्र–

"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥" (ऋग्वेद 10.191.4)

मानसिक, भावनात्मक और वैचारिक एकता का संदेश देता है। यह दृष्टिकोण वैश्विक शांति, सह-अस्तित्व और सहयोग की आधारशिला प्रस्तुत करता है, जो आज के युग की अनिवार्य आवश्यकता है।

4. सतत विकास और पर्यावरण नैतिकता (Environmental Ethics) –

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में सतत विकास (**Sustainable Development)** मानवता के समक्ष एक अनिवार्य लक्ष्य के रूप में उभरकर सामने आया है। संयुक्त राष्ट्र के 'सतत विकास लक्ष्यों' (**SDGs)** की प्राप्ति के लिए केवल नीतिगत उपाय पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि एक ऐसी जीवन-दृष्टि की आवश्यकता है जो प्रकृति के साथ संतुलित सह-अस्तित्व को सुनिश्चित कर सके। इस संदर्भ में भारतीय ज्ञान-परम्परा एक व्यावहारिक और नैतिक मॉडल प्रस्तुत करती है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति का 'दोहन' (**Milking)** स्वीकार्य है, किंतु 'शोषण' (**Exploitation)** को पूर्णतः निषिद्ध माना गया है।

अथर्ववेद के 'भूमि सूक्त' में कहा गया है–

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।"

यह भाव मनुष्य और प्रकृति के मध्य मातृ-संतान संबंध को स्थापित करता है, जो पर्यावरणीय उत्तरदायित्व की गहन चेतना को उत्पन्न करता है।

4.1 सचेत उपभोग

ईशावास्योपनिषद का मंत्र– "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा"–त्यागपूर्वक और संयमित उपभोग का संदेश देता है। यह विचार आधुनिक उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के विपरीत संतुलित जीवन-शैली को प्रोत्साहित करता है। यह सिद्धांत आज के **'Circular Economy'** और **'Zero Waste'** जैसे वैश्विक मॉडलों के अनुरूप है।

भगवद्गीता में भी प्रकृति के संतुलन और पारस्परिक सहयोग पर बल दिया गया है–

"देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।" (गीता 3.11)
अर्थात्–तुम प्रकृति (देवताओं) का पोषण करो, वे तुम्हारा पोषण करेंगे।

4.2 जैव विविधता संरक्षण

भारतीय परम्परा में वृक्षों (पीपल, तुलसी), नदियों (गंगा, नर्मदा) तथा पशु-पक्षियों को पवित्र मानकर संरक्षित किया गया है। यह केवल धार्मिक आस्था नहीं, बल्कि पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने की एक वैज्ञानिक पद्धति है।
इस प्रकार भारतीय पर्यावरण नैतिकता मानव और प्रकृति के बीच संतुलन स्थापित कर सतत विकास के लिए एक स्थायी और व्यावहारिक मार्ग प्रदान करती है।

5. स्वास्थ्य और समग्र कल्याण –

आधुनिक वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य की अवधारणा निरंतर विकसित हो रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (**WHO)** ने स्वास्थ्य को केवल रोग की अनुपस्थिति न मानकर शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की समग्र स्थिति के रूप में परिभाषित किया है। यह दृष्टिकोण भारतीय ज्ञान-परम्परा की उस प्राचीन अवधारणा के अत्यंत समीप है, जिसमें 'स्वास्थ्य' का अर्थ ही है– 'स्व' में स्थित होना, अर्थात् अपने वास्तविक स्वरूप, संतुलन और सामंजस्य में स्थापित रहना।
भारतीय परम्परा में स्वास्थ्य केवल शरीर तक सीमित नहीं है, बल्कि मन, बुद्धि और आत्मा के संतुलन को भी समान रूप से महत्व दिया गया है। इस समग्र दृष्टिकोण के कारण ही आयुर्वेद और योग आज वैश्विक स्तर पर अत्यंत प्रासंगिक बन गए हैं।

5.1 आयुर्वेद

आयुर्वेद केवल एक चिकित्सा प्रणाली नहीं, बल्कि 'जीवन का विज्ञान' है, जो स्वस्थ जीवन जीने की कला सिखाता है। इसका मूल आधार 'त्रिदोष' सिद्धांत–वात, पित्त और कफ–है, जो शरीर की जैविक क्रियाओं का नियमन करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति भिन्न होती है, इसलिए आयुर्वेद व्यक्तिगत (**Personalized)** उपचार पर बल देता है, जो आधुनिक '**Personalized Medicine'** के सिद्धांत के समान है।
चरक संहिता में आयुर्वेद की व्यापक परिभाषा दी गई है–

"हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥"

अर्थात्–जो आयु के हित-अहित, सुख-दुःख तथा उसके मापन का ज्ञान कराए, वही आयुर्वेद है। यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि आयुर्वेद जीवन के प्रत्येक पक्ष का सम्यक् विश्लेषण करता है।

5.2 योग

योग भारतीय परम्परा की एक ऐसी साधना पद्धति है, जो शरीर और मन दोनों के संतुलन को स्थापित करती है। महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि–व्यक्ति के समग्र विकास का मार्ग प्रशस्त करता है।
वर्तमान समय में, जब वैश्विक स्तर पर तनाव, अवसाद और मानसिक विकार बढ़ रहे हैं, योग एक वैज्ञानिक और प्रभावी समाधान के रूप में उभरा है। यह न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करता है, बल्कि मानसिक शांति, एकाग्रता और आत्म-संतुलन भी प्रदान करता है।

इस प्रकार आयुर्वेद और योग मिलकर स्वास्थ्य की एक ऐसी समग्र अवधारणा प्रस्तुत करते हैं, जो आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध हो रही है।

6. विज्ञान, गणित और भाषा विज्ञान की विरासत

भारत ने विश्व को केवल शून्य (0) ही नहीं दिया, बल्कि वह गणितीय दृष्टि दी जिससे आधुनिक गणना संभव हुई।

6. विज्ञान, गणित और भाषा विज्ञान –

6.1 गणित और खगोल विज्ञान

भारतीय ज्ञान-परम्परा ने गणित और खगोल विज्ञान के क्षेत्र में अद्वितीय योगदान दिया है। बौधायन शुल्ब सूत्र में वर्णित सिद्धांत, जिसे आज 'पाइथागोरस प्रमेय' के नाम से जाना जाता है, यह सिद्ध करता है कि भारतीय मनीषियों को ज्यामिति का गहन ज्ञान था। इसी प्रकार, महान गणितज्ञ आर्यभट्ट ने यह स्थापित किया कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है तथा सूर्य ग्रहण और चंद्र ग्रहण के वैज्ञानिक कारणों को स्पष्ट किया। दशमलव प्रणाली, शून्य (0) का आविष्कार तथा त्रिकोणमिति का विकास भी भारत की ही महत्वपूर्ण देन हैं, जिन पर आधुनिक गणित और विज्ञान आधारित है।

6.2 भाषा विज्ञान

महर्षि पाणिनी की 'अष्टाध्यायी' भाषा विज्ञान का अद्वितीय ग्रंथ है, जो अत्यंत व्यवस्थित और वैज्ञानिक व्याकरण प्रणाली प्रस्तुत करता है। इसकी सूत्रात्मक संरचना और तार्किक अनुक्रम आधुनिक कंप्यूटर प्रोग्रामिंग तथा **'Natural Language Processing' (NLP)** के सिद्धांतों से साम्य रखती है। इस प्रकार भारतीय भाषा विज्ञान आज भी आधुनिक तकनीकी विकास के लिए प्रेरणास्रोत बना हुआ है

7. वैश्विक शिक्षा और चरित्र निर्माण

वैश्विक शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य में केवल तकनीकी ज्ञान या कौशल पर्याप्त नहीं है, बल्कि नैतिकता, चरित्र निर्माण और समग्र व्यक्तित्व विकास भी उतना ही आवश्यक है। नई शिक्षा नीति (**NEP** 2020) के संदर्भ में भारतीय ज्ञान-परम्परा (**IKS)** को आधुनिक शिक्षा प्रणाली के साथ जोड़ना समय की आवश्यकता है। भारतीय शिक्षा पद्धति का मूल उद्देश्य केवल 'आजीविका' अर्जित करना नहीं, बल्कि 'जीवन' का निर्माण करना रहा है।

"सा विद्या या विमुक्तये"–यह सूक्ति इस बात को स्पष्ट करती है कि सच्ची विद्या वही है जो मनुष्य को अज्ञान, बंधन और संकीर्णता से मुक्त करे।

प्राचीन भारत के तक्षशिला और नालंदा जैसे विश्वविद्यालय बहु-विषयक (**Inter-disciplinary)** शिक्षा के उत्कृष्ट केंद्र थे, जहाँ व्याकरण, खगोल विज्ञान, आयुर्वेद, दर्शन और राजनीति जैसे विषयों का समन्वित अध्ययन कराया जाता था। आज विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय भी इसी समग्र और बहुआयामी शिक्षा मॉडल की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

४. चुनौतियाँ और भविष्य की राह

भारतीय ज्ञान-परम्परा के पुनरुत्थान के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा 'औपनिवेशिक मानसिकता' (**Colonial Mindset)** रही है, जिसके कारण स्वदेशी ज्ञान को लंबे समय तक अवैज्ञानिक या अंधविश्वास के रूप में देखा गया। परिणामस्वरूप, इस समृद्ध परम्परा का समुचित अध्ययन और प्रयोग बाधित हुआ।

वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय ज्ञान-परम्परा के सिद्धांतों और अवधारणाओं का आधुनिक वैज्ञानिक मानकों के आधार पर परीक्षण (**Validation)** किया जाए, ताकि उनकी प्रामाणिकता और उपयोगिता को वैश्विक स्तर पर स्थापित किया जा सके।

साथ ही, **IKS** को विद्यालयी शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा एवं शोध स्तर तक समाविष्ट करना आवश्यक है, जिससे नई पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ सके।

संस्कृत भाषा को केवल एक प्राचीन भाषा न मानकर 'ज्ञान-भाषा' (**Knowledge Language)** के रूप में पुनर्जीवित करना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यही भाषा भारतीय ज्ञान-परम्परा की मूल आधारशिला है।

९. निष्कर्ष –

निष्कर्षतः, भारतीय ज्ञान-परम्परा 'स्व' (व्यक्ति) और 'समष्टि' (विश्व) के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य करती है। यह मनुष्य को केवल भौतिक उन्नति तक सीमित न रखकर, उसे आंतरिक चेतना, नैतिकता और सार्वभौमिक एकात्मता से जोड़ती है। इस परम्परा का मूल स्वरूप संतुलन, सह-अस्तित्व और सतत विकास की भावना पर आधारित है, जो आज के वैश्विक संकटों– जैसे पर्यावरणीय असंतुलन, मानसिक तनाव और सामाजिक विखंडन–के समाधान के लिए अत्यंत प्रासंगिक है।

आधुनिक विज्ञान जहाँ भौतिक जगत की संरचना और प्रक्रियाओं को समझने में सहायक है, वहीं भारतीय दर्शन जीवन के गूढ़ आध्यात्मिक और नैतिक आयामों को स्पष्ट करता है। इन दोनों का समन्वय ही एक संतुलित, समृद्ध और स्थायी विश्व व्यवस्था की स्थापना कर सकता है।

यजुर्वेद का शांति मंत्र–

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

पूरे आकाश में और साथ ही विशाल अंतरिक्ष में हर जगह शांति हो। इस पृथ्वी पर, जल में और सभी जड़ी-बूटियों, पेड़ों और लताओं में शांति हो। पूरे ब्रह्मांड में शांति का प्रवाह हो। परमपिता ब्रह्म में शांति हो। और केवल शांति और हमेशा शांति हो। ओम् हमें और सभी प्राणियों के लिए शांति, शांति और शांति!

यह समस्त सृष्टि में शांति, संतुलन और समरसता की स्थापना का संदेश देता है, जो वैश्विक कल्याण का आधार है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली (1923), **इंडियन फिलॉसफी** (खंड 1 एवं 2), लंदन: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. काणे, पाण्डुरंग वामन (1930–1962), **हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र** (खंड 1–5), पुणे: भांडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट।
3. कपूर, कपिल (2005), **इंडियन नॉलेज सिस्टम्स**, नई दिल्ली: डी.के. प्रिंटवर्ल्ड।
4. अरोड़ा, सुधीर (2021), **प्राचीन भारतीय परंपरा में पर्यावरण नैतिकता**, नई दिल्ली।
5. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय (2020), **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020**, नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।
6. फ्रॉले, डेविड (2001), **योग एंड आयुर्वेद: सेल्फ-हीलिंग एंड सेल्फ-रियलाइजेशन**, दिल्ली: लोटस प्रेस।
7. मिश्रा, विद्यानिवास (2008), **भारतीय संस्कृति के आधार**, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
8. आर्यभट्ट (499 ई.), **आर्यभटीयम्** (संपादक: के. एस. शुक्ल एवं के. वी. सरस्वती), नई दिल्ली: इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी।
9. अग्निवेश, चरक (प्रणीत), **चरक संहिता (सूत्रस्थानम्)**, (संपादक: पं. काशीनाथ शास्त्री एवं डॉ. गोरख नाथ चतुर्वेदी), वाराणसी: चौखम्बा भारती अकादमी।